सूरदास के काव्य में गोपियों का चरित्र चित्रण

डॉ. सविता
हिन्दी–विभाग
माता सुन्दरी कॉलेज, दिल्ली

सारांशिका

महाकवि सूरदास ने गोपियों के चरित्र को बहुत गहनता के साथ अपने पदों में चिन्हित किया है जिसका उदाहरण हिन्दी साहित्य में अन्यत्र देखने को नहीं मिलता है। सूरदास ने अपने 'सूरसागर' में कृष्ण–जन्म से लेकर कृष्ण के द्वारिकागमन तक की कथा में गोपियों का बहुत सुन्दर चरित्र चित्रण कर वर्णन किया है। 'सूरसारावली' के होली–रुपक में भी इनका अलौकिक रुप में चित्रित अवस्था का चित्रण देखने को मिलता है। ब्रज प्रदेश कीस्त्रियाँ समाज के अन्तर्गत विविध स्थानों पर इनके अनेक स्वरुप दिखलाई देते हैं, किन्तु मुख्य रुप से गोपियाँ सर्वाधिक मुखर हुई हैं–भ्रमरगीत प्रसंग में क्योंकि कवि ने 'भ्रमरगीत' प्रसंग की उद्भावना श्रीमद्भागवत से ही प्राप्त की है।सूरदास ने उसको पूर्णतया नवीन रुप प्रदान कर दिया है। सूरदास ने उन्हें अनेक सात्विक चिन्तन तत्वों के साथ–साथ यह नवीनता सर्वाधिक गुण–मात्रा में राधा एवं गोपिकाओं के प्रस्तुतीकरण में प्रस्फूटित हुई है जिसका चित्रण उनके अनेक पदों में दिखलाई देता है।
वस्तुतः 'भ्रमरगीत का मूलाधार राधादि यह गोपिकायें ही हैं। सूरदास के सम्पूर्ण काव्य में देखा जाये तो उद्धव, कृष्ण और भ्रमर आदि सभी चरित्रों की कल्पना तथा कुब्जा आदि के चरित्र चित्रण इन्हीं के चरित्र को मुखरित करने के लिये दिखलाई पड़ते हैं। कवि का समस्त कथ्य–भक्ति, दर्शन, प्रेमान्तर्गत, विरह आदि–इन्हीं के द्वारा प्रकट हुआ है।

प्रस्तावना

भ्रमरगीत के तीन–चौथाई से अधिक पद गोपियों की वाणी हैं, जिनके एक–एक शब्द में इनका व्यक्तित्व संजोया गया है। इस तरह से देखने में आता है कि सभी दृष्टियों से गोपिकायें ही प्रस्तुत प्रसंग की नायिका हैं। इस सम्बन्ध में डॉ. ओमप्रकाशने 'भ्रमरगीत–प्रसंग और सूर' नामक निबन्ध में 'भ्रमरगीत' की गोपिकाओं को चार वर्गों में रखते हैं जिसका उल्लेख इस प्रकार किया गया है।राधा जो आद्योपांत मौन–भाव से सब कुछ सहन करती हैं और कृष्ण से प्राप्त उपेक्षा भाव का कारण भी अपनी ही किसी चूक को मानती है।गम्भीर प्रवृति की गोपियाँ जो निर्गुण को बुरा तो नहीं बतातीं किन्तु स्वयं को उसके योग्य नहीं मानतीं।उद्धव गोपिकायें जो उद्धव को बुरा–भला कहती हैं।''जहाँ उदासी, गम्भीर, शोक या विचारशीलता का नाम भी नहीं है, केवल कहकहा मारकर विनोद का रस लूटना ही जान पड़ता है। यह वर्ग रास में भी अग्रणी था और इस सभा में भी संकोच न होने के कारण, हमारा अनुमान है कि इस वर्ग में वय : साथ की किशोरियाँ ही रही होंगी।'' इसलिए इनके शब्दों में प्रथम 'तीनों वर्गों में सूर की विशेषता नहीं, उनका तो चतुर्थ वर्ग ही मनमोहक है। ...सूर को इन किशोरियों की विचारधारा का एक ही सार है कि एक वेग भरे कहकहे से उदासी के बादलों को छिन्न–भिन्न कर देना चाहिए। उनके कथन में कहीं भी अभिधा से काम नहीं लिया गया, उनके प्रत्येक शब्द में वक्रता है–एक छिपी हुई चंचलता है।''1 इन गोपिकाओं की चारित्रिक महत्व कोइस तरह से चित्रित सूर के काव्य में देखा जा सकता है। ''निःसन्देह सूर को पाकर व्रज की संस्कृति और व्रज संस्कृति को पाकर सूर धन्य हो गए।''2
'भ्रमरगीत' में सभी गोपियाँ कृष्ण की प्रेमिका हैं और उनका प्रेमभाव ही आदर्श है। वह सभी गोपियाँ कृष्ण से एकनिष्ठ, अनन्य और तन–मन–वचन से निरन्तर प्रेम करती हैं। इनमें सभी में सर्वाधिक उच्चकोटि तक पहुँची हैं–राधा। अतः राधा कृष्ण की सर्वाधिक प्रमुख प्रेमिका हैं। अतएव कृष्ण–विरह में सर्वाधिक व्यथित भी वही होती हैं किन्तु अपनी व्यथा को प्रकट नहीं करतीं हैं। यहाँ तक की कृष्ण–सखा उद्धव से भी कुछ नहीं कहतीं हैं बल्कि अन्य गोपियों के व्यंग्य–वाणों को सुनकर भी उनको टोकती ही हैं। इस सन्दर्भ मेंडॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्द देखिए, यह है कि, ''भारतवर्ष के किसी कवि ने राधा का वर्णन इस पूर्णतया के साथ नहीं किया।...सूरदास की यह सृष्टि अद्वितीय है। विश्व–साहित्य में ऐसी प्रेमिका नहीं है–नहीं है।''3 वस्तुतः यह सभी गोपिकायें कृष्ण–प्रेम के लिये तन–मन–वचन वार चुकी हैं, उनके हृदय में कृष्ण की ही मूर्ति है। सोते, जागते, स्वप्न में वे कृष्ण–कृष्ण रटती हैं। उनमें से गोपियों के भाव को सूरदास के काव्य में देखा जा सकता है।

जैसे :–

''हमारे हरि हारिल की लकरी
मन बच क्रम नंदनंदन सों उर यह दृढ़ करि पकरी।।''
''मन चुभ रही माधुरी मूरति रोम–रोम अरुझाइ।''
''सूरदास मोहि निमिष न बिसरत मोहन मूरति सोवत जागत।।'' – सूरसागर

गोपियों की प्रेमभक्ति इनके उपालम्भ, परिहास, व्यंग्य और उक्तियाँ तक इसी अटल प्रेम में उद्भूत चित्रित सूरदास काव्य में देखने को मिलती है। गोपियों की विरह आशक्ति भी निरन्तर बनी हुई है। सभी गोपियाँ कृष्ण के मथुरा–प्रवास करने के फलस्वरुप उनके विरह में ग्रस्त हैं। उनके इस विरह का चित्रण ही 'भ्रमरगीत' का मूल प्रतिपाद्य है, इसमें कवि सूरदास ने इन विरहणी गायिकाओं ने आदर्श–विरह और उनकी न जाने कितनी स्थितियों, मनःस्थितियों को काव्य में चित्रित किया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल (त्रिवेणी) के शब्दों में देखिए, ''वियोग की जितनी अन्तर्दशाएँ हो सकती है, जितने ढंगों से उन दशाओं का साहित्य में वर्णन हुआ है और सामान्यतः हो सकता है, सब उसके भीतर मौजूद हैं।...गोपियों की वियोग–दशा का जो धारा–प्रवाह वर्णन है उसका तो कहना ही क्या है। न जाने कितनी मानसिक दशाओं का संचार उसके भीतर है, कौन गिन सकता है ?'' ''यदि हम सूरदास के केवल विप्रलम्भ श्रृंगार को ही लें अथवा 'भ्रमरगीत' को ही देखते हैं तब न जाने कितने प्रकार की मानसिक दशायें ऐसी मिलेंगी जिनके नामकरण तक नहीं हुए हैं।''4 इस तरह से काव्यशास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक दोनों ही दृष्टियों से गोपिकाओं का विरह–रुप विविध, व्यापक, अनन्त और मार्मिक स्वरुप में चित्रित किया गया है। राधा की यह दशा सूर सागर काव्य में देखी जा सकती है :–

''अति मलीन वृषभानुकुमारी।
हरि स्रमजल अन्तर–तनु भीजे ता लालच न धुआवति सारी।।
अधोमुख रहति उरधनहिं चिंतवति ज्यों गध हारे थकित जुआरी।
छूटे चिंकुर बदन कुम्हलाने ज्यों नलिनी हिमकर की मारी।।
हरि–संदेस सुनि सहज मृतक भई, इक बिरहिनि दूजे अलि जारी।''

इसी तरह से दूसरी ओर राधा की भाँति गोपियों की एक विरह दशा भी देखिए :–

''ऊधो !तुम कहियो हरि सों जाय हमारे जिय को दरद।
दिन नहिं चैन, रैन नहीं सोवत, पावक भई जुन्हैया सरद।।
जब तैं अक्रूर लै गए मधुपुरी, भइ बिरह तन बाय छरद।
कीन्हीं प्रबल लगी अति, ऊधो ! सोचत भइ जस पीरी हरद।।''

श्री बल्लभ से ज्ञान पाकर ही सूर ने 'सूरसागर' को भक्तिपरक काव्य–रचना बनाया था। सूरसागर' का भक्तिपरक रुपक श्रीकृष्ण (ब्रह्म) और भगवती राधा (प्रकृति) का अखण्ड और नित्य रास नित्य प्रतिदिन नई लीला में हो रहा है। कुछ सौभाग्यशालिनी गोपियाँ भगवान के अनुग्रह से मुरली की ध्वनि सुनकर सुत, पति, ग्रह आदि साँसारिक सम्बन्धों को छोड़कर उस नित्य रास में साक्षी रुप से भाग लेती हैं। महाप्रभु की आज्ञा से 'भीमद्भागवत' के इस रहस्य को सूर ने 'भाषा' में गाया है। इसीलिए 'भ्रमरगीत' का प्रसंग है, जो मुख्यतः गोपियों की भक्ति–भावना–युक्त विप्रलम्भ स्थितियों का दर्पण कहा जा सकता है। श्री रामधारी सिंह 'दिनकर'भावना को स्पष्ट रुप में देखा जा सकता है। सूर की गोपियाँ ब्रज की गोपियाँ नहीं, प्रत्युत सगुणोपासना की उस भावना की प्रतिमाएँ हैं जो सूर के समय में पूरे उभार पर आ रही थीं।''

'भ्रमरगीत' की गोपिकाओं के लौकिक प्रेम में मुख्य रुप से प्रेमाभक्ति और उसमें भी कामरुपा भक्ति–भावना निहित है। ''लोक सामान्य भाव विचार रुचि एवं आदर्शों की पुष्टि कर कवि ने उन्हें समूची मानवता के अनुराग का आलम्बन बनाया है।''5भ्रमरगीत के पदों में.....भक्ति की सीमाओं का जैसा सुन्दर चित्रण हुआ है, वह सूरदास की भक्ति–पद्धति के दार्शनिक एवं भावुक दोनों रुप सामने लाने में समर्थ हैं। इस प्रकार से गोपियों के कुछ कथन भी उनकी इसी आदर्श भक्ति–भावना के सम्बन्ध में देखे जा सकते हैं :

''नयनहि वहै रुप जो देख्यो।
तौ ऊधो यह जीवन जग को साँचु सफल करि लेख्यो।।''
''हम अलि !गोकुलनाथ अराध्यो।
मन वच क्रम हरि सों धरि, पतिव्रत प्रेमयोग–तप साध्यो।।''

भ्रमरगीत की सभी गोपिकायें अपने युग की नारीमूर्ति होने के साथ–साथ परोक्षतः कवि युग की नारी स्थिति की भी प्रदर्शित कर रही है। परम्परा से भारतीय साहित्य और समाज में नारी को या तो देवी माना गया है अथवा 'दानवी' कहकर उपेक्षित किया गया है। भ्रमरगीत की गोपिकाओं में हतभाग्य, विवश, निरुपाय और करुणापरक रुप में पुरुष (कृष्ण) से उपेक्षित गोपिकाएँ भी अधिक हैं। 'भ्रमर' के माध्यम से कहे गये पदों में उनका यही स्वरुप चित्रित हुआ है। डॉ. पुष्पपाल सिंहने गोपियों की भावना के सन्दर्भ में कहा है कि, ''कवि ने नारी की इसी मौन वेदना को स्वर दिया।'' इस तरह के उदाहरण भी इसी मान्यता को प्रदर्शित कर रहे हैं :–

''हम अहीरि अबला सठ मधुकर !तिन्हैं जोग कैसे सौहै ?''
''कहन सुनन को हम हैं ऊधो !सूर अनत बिरमावत।।''
''ब्याहौ लाख धरौ दस कुबरी, अन्तहि कान्ह हमारे।।''

सूरदास के काव्य में देखा जाए तो ब्रज प्रदेश में रहने वाली यह गोपिकाएँ निश्छल हैं। यह गोपियाँ सरल, सहज और पवित्र हृदय से कृष्ण की उपासना करती हैं। गोपियाँ न तो किसी को धोखा देती हैं और न धोखा पाना चाहती हैं। इनमें भी सर्वोत्तम और सर्वाधिक प्रभावित करने वाली हैं–राधा।वह राधा अपनी ही चूक पर पश्चात्ताप करती हैं। कोई उसके नन्दलाल की कही हुई बातों को अपने हृदय में लिख लिया है और वह प्रिय के मित्र उद्धव को बुरा–भला कहना भी ठीक नहीं समझतीं हैं।'' ''सूरदास की राधा का हृदय सौन्दर्य देखना हो तो उद्धव का प्रसंग देखिये। गोपियों ने क्या–क्या नहीं कहा ? कृष्ण को भी कहा, बेचारे भौंरे की तो दुर्गति ही कर डाली। पर हाय, राधिका ने क्या कहा ? उस बरसाने की चोरटी ने कुछ भी नहीं कहा–कुछ भी नहीं।'' इतना कहती है–''सखि री ! हरिसिंह दोश जनि देहु। ताते मन इतनों दुख पावत मेरोइ कपट सनेहु।''इसी तरह से गोपियाँ भी अपने आप को, स्थान–स्थान पर, भोरी, सठ, ग्रामीणा, बावरी, अहीरी, अजान, मति–भोरी, आदि कह–कहकर अपने इसी निश्छल ग्राम्य–बाला स्वरुप को चित्रित कर रही है। इनमें कहीं भी कोई स्वार्थ भावना नहीं दिखलाई पड़ती है।सूरकाव्य की गोपिकाओं में कुछ नारी–स्वभाव की दुर्बलताएँ भी हैं। कुब्जा–ईर्ष्या, प्रेम–त्याग की सलाह देने वाले उद्धव को बुरा–भला कहती हैं। परस्त्री–रमण करने वाले प्रिय कृष्ण पर करारे व्यंग्य और उपालम्भ कसते हैं तथा भ्रमर की तो दुर्गति ही कर डालतीं हैं। ऐसी ही कुछ दुर्बलताएँ हैं जो गोपियों में कहीं न कहीं देखने को मिलती है किन्तु इन सबके बावजूद फिर भी गोपियाँ सरल स्वभाव के स्वरुप को अपनाए हुए हैं। कहीं भी उनमें चपलता या स्वार्थता देखने को नहीं मिलती है।

निष्कर्ष :

सूरदास के काव्य में देखा जाए तो ब्रज प्रदेश में रहने वाली यह गोपिकाएँ निश्छल हैं। यह गोपियाँ सरल, सहज और पवित्र हृदय से कृष्ण की उपासना करती हैं। गोपियाँ न तो किसी को धोखा देती हैं और न धोखा पाना चाहती हैं। इनमें भी सर्वोत्तम और सर्वाधिक प्रभावित करने वाली हैं–राधा।वह राधा अपनी ही चूक पर पश्चात्ताप करती हैं। कोई उसके नन्दलाल की कही हुई बातों को अपने हृदय में लिख लिया है और वह प्रिय के मित्र उद्धव को बुरा–भला कहना भी ठीक नहीं समझतीं हैं।''

सन्दर्भ सूची :

- डॉ. ओम प्रकाश – भ्रमरगीलत प्रसंग और सूर – पृ.सं. 119
- डॉ. मुंशी राम शर्मा सोम – सूरदास – पृ.सं. 222
- डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेती – सूर साहित्य – पृ.सं. 103–119
- कृष्ण शर्मा – विद्यावती और सूर काव्य में राधा – पृ.सं. 111–112
- सत्य नाराण त्रिपाठी – सूर की साहित्य साधना – पृ.सं. 399